अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्य

☐ **डॉ० प्रेम सुमन जैन,** अध्यक्ष, जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग, उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर

अपभ्रंश भाषा में काव्य की रचना कब से प्रारम्भ हुई यह कह पाना कठिन है। क्योंकि अपभ्रंश की प्रारम्भिक रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं। अपभ्रंश के जिन कवियों का अभी तक पता चला है उसमें गोविन्द और चतुर्मुख प्राचीनतम हैं। इनकी अभी तक कोई रचना उपलब्ध नहीं हुई है। स्वयम्भू और महाकवि धवन ने इन्हें अपभ्रंश के आदिकवि के रूप मं स्मरण किया है। इससे ज्ञात होता है कि ईसा की छठी शताब्दी में अपभ्रंशकाव्यों की रचना होने लगी थी। स्वम्यभू के समय तक (७ वीं श०) अपभ्रंश-काव्य की परम्परा विकसित हो गयी थी। स्वयम्भू की पौढ़ और परिपुष्ट रचना को देखकर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि अपभ्रंश की काव्य रचनाएँ प्राकृत आदि की प्राचीन काव्यपरम्परा से विकसित हुई हैं।

अब तक अपभ्रंश साहित्य की लगभग १५० रचनाएँ प्रकाश में आयी हैं। उनके सम्पादन-प्रकाशन का कार्य चल रहा है। प्रकाशित रचनाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अपभ्रंश साहित्य की अनेक विधाएँ हैं। प्रबन्धकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य, सन्धिकाव्य, रासा, चर्चरी आदि अनेक भेद विद्वानों ने किये हैं। किन्तु अपभ्रंश रचनाओं की विषयवस्तु और अन्तर्संगठना के आधार पर उन्हें प्रबन्धकाव्य और मुक्तककाव्य के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है। अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्यों का विवेचन ही यहाँ प्रतिपाद्य है।

बन्ध सहित काव्य को प्रबन्धकाव्य कहा जाता है। प्रबन्धकाव्य में कोई पौराणिक, ऐतिहासिक, या लोक-विश्रुत कथा होती है, जिसकी वर्णनात्मक प्रस्तुत कवि क्रमबद्ध रूप में करता है। कथा की समस्त घटनाएँ आपस में सम्बद्ध होती है तथा कथा के प्रभाव को अग्रगामी करने के लिए वे परस्पर सापेक्ष होती हैं। प्रमुख कथा के साथ अवान्तरकथाएँ इस प्रकार जुड़ी हुई होती हैं जिससे नायक के चरित्र का क्रमशः उद्घाटन होता रहे। कवि सम्पूर्ण कथा को घटनाओं के आधार पर कई भागों में विभाजित कर लेता है, जो सर्ग, आश्वास, सन्धि आदि के नाम से जाने जाते हैं। प्रबन्धकाव्य के रूप उपलब्ध होते हैं—महाकाव्य एवं खण्डकाव्य। जीवन की सम्पूर्ण अनुभूतियों की अभिव्यक्ति महाकाव्य है तथा कुछ चुनी हुई जीवनपद्धतियों की अभिव्यंजना खण्डकाव्य है। इस स्वरूप भेद के कारण इन दोनों के प्रेरणास्रोत, उद्देश्य एवं प्रभाव में अन्तर है। एकरूपता है तो केवल कथा-सूत्र की अखण्डता में है। महाकाव्य हो अथवा खण्डकाव्य दोनों को अपनी कथा में निरन्तरता रखना आवश्यक है। इस गुण के कारण दोनों ही प्रबन्धकाव्य की कोटि में परिगणित होते हैं।

भारतीय साहित्य में अनेक प्रबन्धकाव्यों की रचना हुई है। संस्कृत और प्राकृत में इनकी प्रचुरता है; किन्तु स्वरूपभेद भी है। संस्कृत में अधिकांश महाकाव्यों की रचना हुई है, जिनका आधार अधिकतर पौराणिक है। प्राकृत के प्रबन्धकाव्यों में पौराणिकता होते हुए भी लौकिक और धार्मिक वातावरण अधिक है। प्रवरसेन का 'सेतुबन्धु' और वाक्पतिराज का 'गउडवहो' शास्त्रीय शैली में निर्मित प्राकृत के प्रबन्धकाव्य हैं। विमलसूरि का 'पउमचरियं' पौराणिक शैली का है तो हेमचन्द्र का 'द्वयाश्रयकाव्य' ऐतिहासिक प्रबन्धकाव्य का प्रतिनिधित्व करता है। प्राकृत में रोमांचक शैली में प्रबन्धकाव्य लिखे गये हैं। कौतूहल की 'लीलावईकहा' इस शैली का उदाहरण है। प्राकृत में रोमांचक शैली में कुछ खण्डकाव्य भी लिखे गये हैं, जिन्होंने प्रबन्धकाव्य की परम्परा को आगे बढ़ाया है।

अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्य संस्कृत एवं प्राकृत की सुदीर्घ परम्परा से प्रभावित है। किन्तु उन पर प्राकृत का सीधा प्रभाव है। अपभ्रंश में शास्त्रीय शैली के प्रबन्ध काव्य नहीं हैं। सम्भवतः लोकभाषा होने के कारण भी अपभ्रंश में विशुद्ध महाकाव्य लिखे जाने की परम्परा प्रारम्भ नहीं हुई। प्रबन्धकाव्य की कुछ निश्चित विशेषताओं के आधार पर अपभ्रंश में जो प्रबन्धकाव्य हैं उन्हें तीन प्रकार का माना जा सकता है—पौराणिक, धार्मिक, एवं रोमांचक। यह विभाजन भी विशिष्ट गुणों की प्रधानता के कारण है अन्यथा अपभ्रंश की प्रायः सभी रचनाएँ पौराणिकता, धार्मिकता एवं रोमांचकता से किसी न किसी मात्रा में युक्त होती है।

पौराणिक प्रबन्धकाव्य

अपभ्रंश में पौराणिक कथावस्तु को लेकर जो रचनाएँ लिखी गयी हैं उनमें कुछ महाकाव्य हैं, कुछ चरित-काव्य। किन्तु उनकी संगठना एक तरह की है। जैनपरम्परा के अनुसार महापुराण वह है जिसमें वर्णन हो। अधिकतर त्रेसठशलाका पुरुषों का जीवन-चरित इनमें वर्णित होता है। इस प्रकार के अपभ्रंश के पौराणिक प्रबन्धकाव्य निम्न हैं—

(१) **हरिवंशपुराण** (रिट्ठणेमिचरिउ)—महाकवि स्वयम्भू। इसमें ११२ सन्धियाँ हैं तथा श्रीकृष्ण के जन्म से हरिवंश तक की भवावली का विस्तृत वर्णन है।

(२) **हरिवंशपुराण**—महाकवि धवल। १८ हजार पद्यों में विरचित यह प्रबन्धकाव्य अभी तक अप्रकाशित है।

(३) **महापुराण**—पुष्पदन्त। इसमें प्रारम्भ में २४ तीर्थंकरों तथा बाद राम और कृष्ण की जीवनगाथा विस्तार से वर्णित है।

(४) **पाण्डवपुराण**—यशःकीर्ति। इसमें ३४ सन्धियों में पाँच पाण्डवों की जीवनगाथा वर्णित है।

(५) **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। ४४ सन्धियों में कौरव-पाण्डवों की गाथा का वर्णन। हरिवंशपुराण नाम से अन्य रचनाएँ भी अपभ्रंश में उपलब्ध हैं।

(६) **पउमचरिउ**—स्वयम्भू। इसमें रामकथा का विस्तार से वर्णन है। चरित नामान्त होने पर भी विषय-वस्तु की दृष्टि से इसे पौराणिक प्रबन्ध ही मानना होगा। यद्यपि इसमें पौराणिकता अन्य प्रबन्धों की अपेक्षा कम है। कथा का विस्तार एक निश्चित क्रम से हुआ है।

अपभ्रंश के इन पौराणिक प्रबन्धकाव्यों में राम और कृष्ण कथा की प्रधानता है। रामायण और महाभारत इनके उपजीव्य काव्य थे। यद्यपि इन कवियों ने अपनी प्रतिभा और पाण्डित्य के कारण इन प्रचलित कथाओं में पर्याप्त परिवर्तन किया है तथा अपनी मौलिकता बनाये रखी है। इन प्रबन्धकाव्यों में वर्णन की दृष्टि से भी प्रायः समानता है यथा—

१. सभी के प्रारम्भ में तीर्थंकरों की स्तुति।
२. पूर्व कवियों एवं विद्वानों का स्मरण।
३. विनम्रता-प्रदर्शन।
४. ग्रन्थ रचना का लक्ष्य व काव्य विषय का महत्त्व।
५. सज्जन-दुर्जन वर्णन।
६. आत्म-परिचय।
७. श्रोता-वक्ता शैली।

प्रायः प्रत्येक पौराणिक प्रबन्ध में समवसरण की रचना में गौतम गणधर और श्रेणिक उपस्थित रहते हैं तथा श्रेणिक के पूछने पर गणधर अथवा वर्धमान कथा का विस्तार करते हैं। काव्य सम्बन्धी इन रूढ़ियों के अतिरिक्त प्रबन्धकाव्यों में कुछ पौराणिक अथवा धार्मिक रूढ़ियों का भी प्रयोग देखने को मिलता है। यथा—१. सृष्टि का

वर्णन, २. लोक-विभाजन, ३. धर्म-प्रतिपादन, ४. दार्शनिक खण्डन-मण्डन, ५. अलौकिक तथ्यों की योजना, ६. पूर्व-भवस्मरण तथा ७. स्वप्नदर्शन आदि। अलौकिक तथ्यों के संयोजन के लिए देवता, यक्ष, गन्धर्व, विद्याधर, नाग, राक्षस आदि भी सहायक के रूप में उपस्थित किये जाते हैं। तथा अनेक लोककथाएँ धार्मिक चौखटे में जड़ दी जाती है। इस प्रकार अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्य धर्म, कथा और काव्य इन तीनों के सम्मिश्रण से युक्त होते हैं। इस प्रकार के प्रबन्धकाव्यों की परम्परा अपभ्रंश तक ही सीमित नहीं रही। राजस्थानी एवं गुजराती से होते हुए हिन्दी में भी ऐसे प्रबन्धकाव्य लिखे गये हैं, जिनमें काव्य और पौराणिक रूढ़ियों का प्रयोग हुआ है।

धार्मिक प्रबन्धकाव्य

अपभ्रंश की जिन रचनाओं में पौराणिकता और काल्पनिकता की अपेक्षा धार्मिकता अधिक उभरती है वे धार्मिक प्रबन्धकाव्य हैं। कथा की एकरूपता इनमें भी मिलती हैं। अधिकांश चरित्रग्रन्थ इस कोटि में आते हैं। इनकी रचना जैनधर्म के किसी विशेष व्रत अथवा सिद्धान्त प्रतिपादन के लिए होती है। कुछ काव्यों में धार्मिक-महापुरुषों के जीवनगाथा की ही प्रधानता होती है। इस कोटि के कुछ प्रबन्धकाव्यों का परिचय द्रष्टव्य है।

जसहरचरिउ—यह महाकवि पुष्पदन्त की रचना है। इसमें यशोधर राजा की जीवन कथा वर्णित है। सम्पूर्ण कथानक में पाँच-सात जन्म-जन्मान्तरों के वृत्तान्त समाविष्ट हैं। कथानक का विशेष अभिप्राय है कि जीवहिंसा सबसे अधिक घोर पाप है। उसके परिणाम कई जन्मों तक भोगने पड़ते हैं। अतः जीवहिंसा की क्रिया एवं भावना से भी बचना चाहिए। कथा के इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर यशोधरचरित नाम से ५०-६० रचनाएँ संस्कृत-प्राकृत एवं अपभ्रंश में लिखी गयी हैं।

णायकुमार चरिउ—इस चरित के लेखक भी पुष्पदन्त हैं तथा यह कथा भी धार्मिक उद्देश्य से लिखी गयी है। इस ग्रन्थ के नायक नागकुमार हैं, जो एक राजपुत्र हैं, किन्तु सौतेले भ्राता श्रीधर के विद्वेषवश वे अपने पिता द्वारा निर्वासित नाना प्रदेशों में भ्रमण करते हैं तथा अपने शौर्य, नैपुण्य व कला-चातुर्यादि द्वारा लोगों को प्रभावित करते हैं। अन्त में पिता द्वारा आमन्त्रित होने पर पुनः राजधानी को लौटते हैं। फिर जीवन के अन्तिम चरण में जिनदीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। किसी भी धर्म की प्रभावना के लिए इससे अधिक आकर्षक और मनोरम जीवनचरित दूसरा नहीं हो सकता। सूक्ष्मदृष्टि से विचार करें तो नागकुमारचरित की कथा रामकथा का ही रूपान्तर हैं।

जंबूसामिचरिउ—कहाकवि वीर द्वारा रचित जंबूसामिचरिउ प्रसिद्ध धार्मिक प्रबन्ध काव्य है। इसमें महाकाव्य के सभी गुण विद्यमान हैं। इनका कथानक बड़ा रोचक है। कथा बड़ी लम्बी एवं अवान्तरकथाओं से गुंथी हुई है। जम्बू नामक श्रेष्ठिपुत्र कुमारावस्था में ही संसार से विरक्त होकर मोक्षफल की आकांक्षा करने लगता है। इसकी सूचना मिलते ही उसकी वाग्दत्ता चार श्रेष्ठिकन्याएँ केवल एक दिन के लिए उसे विवाह कर लेने के लिए प्रेरित करती हैं। विवाहोपरान्त मधुरात्रि में चारों वधुएँ और जम्बू सुहागशय्या पर परस्पर वार्तालाप करते हैं। वधुएँ सांसारिक सुखों के गुण गाती हैं और जम्बू आत्मिक सुख के। अन्ततोगत्वा, प्रातःकाल जम्बू की ही जीत होती है और वह अपने स्वजनों सहित दीक्षित हो जाता हैं।

इन रचनाओं के अतिरिक्त विशुद्ध धार्मिक वातावरण से युक्त अन्य प्रबन्ध भी अपभ्रंश में उपलब्ध हैं। सुन्दर-सणचरिउ (नयनंदि), करकंडुचरिउ (कनकामर), जिणदत्तचरिउ (लक्ष्मण), सिद्धचक्कमहाप्य (रइधू) आदि उनमें प्रमुख हैं। वस्तुवर्णन अलंकार, छन्द, रस आदि काव्य उपकरणों की इनमें विविधता है। उदाहरण के लिए कुछ काव्य-चित्र द्रष्टव्य हैं।

उद्यानक्रीड़ा करते हुए जम्बूकुमार किसी कामिनी के यौवन की प्रशंसा करते हुए कहता है—

अब्भसियउ हंसहि गमणु तुज्झु कलचंठिहिं कोमललविउ बुज्झु।
पडिगाहिउ कमलहिं चलणलासु तरुपल्लवेंहि करयलविलासु।
सिक्खिउ वेल्लिहिं भूवंकुडतु सीसत्तभाउ सव्वु वि पवत्तु। —ज० सा० च० ४।१७

(हंसों ने तुझसे गमन का अभ्यास किया, कलकंठी ने कोमल आलाप करना जाना, कमलों ने चरणों से कोमलता सीखी, तरुपल्लवों ने तुम्हारी हथेलियों का विलास सीखा तथा बेलों ने तुम्हारी भौंहों से बांकपन सीखा। इस प्रकार ये सब तुम्हारे शिष्यभाव को प्राप्त हुए हैं।)

महाकवि पुष्पदन्त वस्तु-वर्णन करने में सिद्धहस्त थे। राजगृह का वर्णन करते हुए वे कहते हैं कि मानों वह (नगर) कमल-सरोवर रूपी नेत्रों से देखता था, पवन द्वारा हिलाये हुए वनों के रूप में नाच रहा था तथा ललित लतागृहों के द्वारा मानों लुका-छुपी खेलता था। अनेक जिनमन्दिरों द्वारा मानों उल्लसित हो रहा था—

जोयइ व कमलसरलोयणेंहिं णच्चइ व पवण हल्लियवणेंहिं।
ल्हिक्कइ व ललियवल्लीहरेंहिं उल्लसइ व बहुजिणवरहरेंहिं॥ —ण० कु० च० १।७

वीरकवि द्वारा चांदनी रात का एक मनोरम दृश्य बड़ा ही सूक्ष्म और मौलिक उद्भावनाओं से युक्त है। यथा—गतपतिकाओं के द्वारा अपने हृदयों पर कंचुकी के साथ-साथ गगनांगन में चन्द्रमा शीघ्र उदित हुआ; (जो ऐसा शोभायमान हुआ) मानों घना अन्धकार फैल जाने पर सुन्दर नेत्र वाली नवलक्ष्मी के द्वारा दीपक जलाया गया। ज्योत्स्ना के रस (चांदनी) से भुवन शुद्ध किया गया मानों उसे क्षीरोदधि में डाल दिया गया हो। कामदेव के बन्धु चन्द्रमा की किरणें—क्या गगन अमृत बिन्दुओं को गिरा रहा है, क्या कर्पूर-प्रवाह से कण गिर रहे हैं, क्या श्रीखण्ड के प्रचुर रस-सीकर गिर रहे हैं? (ऐसा लगता है मानों) लार फैलाता हुआ मार्जार गवाक्ष-जालों को गोरस की भाँति से चाटता है इत्यादि—

जालियाउ गयवहहिययहि सहुँ उडउ नहंगणे मयलंछणु लहु।
भमिए तमंधयार वर अच्छिए दिण्णउ दीवउ णं नहलच्छिए।
जोण्हारसेन भुवणु किउ सुद्धउ खीरमहण्णवम्मि णं छूढउ।
किं गयणाउ अभियलवविहडहिं किं कप्पूरपूरकण निवडहिं।
किं सिरिखंडबहलरससीयर मयरद्धयबंधवससहरकर।
जाल गवक्खई पसरियलालउ गोरस भंतिए लिहइ विडालउ। —ज०सा०च० ८।१५

रोमांच प्रबन्ध काव्य

अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्य लोकमानस से अधिक अनुप्राणित हैं। अतः उनमें लोककथा के अधिकांश गुण समाहित हुए हैं, जिनमें काल्पनिकता और रोमांचकता प्रधान है। इसमें अतिशयोक्तिपूर्ण बातों के द्वारा कथानायक के चरित्र का उत्कर्ष बतलाया गया है। अपभ्रंश ने इस शैली को एक ओर जहाँ लोक से ग्रहण किया है, दूसरी ओर वहाँ प्राकृत की रोमांचक कथाओं से। पादलिप्तसूरि की 'तरंगवतीकथा' में आदि से अन्त तक रोमान्स हैं। सच्चे प्रेम की यह अनूठी गाथा है। इसी प्रकार की 'लीलावती', 'सुरसुन्दरी चरित्र', 'रत्नशेखरकथा' आदि अनेक रचनाएँ प्राकृत में हैं, जिनके शिल्प का प्रभाव अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्यों पर अवश्य पड़ा होगा।

अन्य प्रबन्धकाव्यों की तुलना में अपभ्रंश के इन कथात्मक प्रबन्धों की अलग विशेषताएँ हैं। इनकी एक विशेषता बड़ी उनका प्रेमाख्यान-प्रधान होना तथा साहसिक वर्णनों से भरा होना है। इन काव्यों में किसी चित्र-दर्शन आदि द्वारा नायक-नायिका का एक दूसरे के लिए व्याकुल हो जाना, प्राप्ति का उपाय करना, वियोग में झूरना, अनहोनी घटनाओं द्वारा मिलन तथा पुनः बिछोह होना और अन्त में सभी कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर सफल होने का वर्णन उपलब्ध होता है। अपभ्रंश के प्रमुख रोमांचक प्रबन्धकाव्य हैं —

१. विलासवती कथा (साधारण सिद्धसेन)
२. जिनदत्तकथा (लाखू)
३. पउमसिरिचरिउ (धाहिल)। कवि की यह रचना अत्यन्त ललित है। कवि ने इसे 'कर्णरसायन धर्मकथा' कहा है। इस कथा में एक धनी परिवार की विधवा पुत्री की स्थिति का अंकन है। काव्य सरस एवं भावपूर्ण है।

४. जिनदत्त चउपइ (रल्ह)

५. सुदंसणचरिउ (नयनन्दी)

६. सुदर्शनचरित्र (माणिक्यनन्दि)—इस कथा में प्रसिद्ध सुदर्शन सेठ की कथा है। किन्तु काव्य की शैली एवं कथा का विधान बड़ा आकर्षक है। एक भावुक प्रेमी के अन्तर्द्वन्द्व का हृदयग्राही चित्रण इसमें है।

७. श्रीपाल कथा (रइधू)

८. भविसयत्तकहा (धनपाल)

धनपाल की भविसयत्तकहा अपभ्रंश प्रबन्धकाव्यों में कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि इस कथा में श्रुत-पंचमीव्रत का माहात्म्य प्रतिपादन किया गया है, किन्तु काव्य की आत्मा पूर्ण लौकिक है। धनपाल ने सम्भवतः अपभ्रंश में सर्वप्रथम लोकनायक की परम्परा का सूत्रपात किया है। साधु और असाधु प्रवृत्तिवाले दो वर्गों के व्यक्तियों का चरित्र इस प्रबन्ध में विकसित हुआ है। भविष्यदत्त की भ्रमण कथा अनेक घटनाओं को अपने में समेटे हुए है। कवि ने जिन वस्तुओं को वर्णन के लिए चुना है उनमें पूर्णता भर दी है। अलंकारों का प्रयोग सर्वत्र व्याप्त है। उपमा अलंकार की छटा द्रष्टव्य है—

दिक्खइ णिग्गयाउ णं कुलतियउ विणासियसीलउ।
पिक्खइ तुरय वलत्थ परसइ पत्थण भंगाइ व विगयासइं।

—भ०द०क० ४. १०. ४

(उसने गजरहित गजशालाओं को शीलरहित कुलीन स्त्रियों की भाँति देखा तथा अश्वरहित घुड़साल उसे ऐसी दिखायी दी मानो आशारहित भग्न प्रार्थनाएं हों।

कवि धाहिल स्वाभाविक वर्णन करने में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने प्रकृति एवं मानव-स्वभाव के सजीव चित्र उपस्थित किये हैं। यशोमती की विरहवेदना हृदय को प्रभावित करने वाली है—

आरत्त-नयण, विच्छाय-वयण उम्मुक्क-हास, पसरंत-सास।
दरमलिय-कंति, कलुणं रुपन्ति उलिग्गदीण निसि सयल खीण।
आहरण-विवज्जिय विगय-हार उच्चिणिय-कुसुम नं कुंद-साह।

—प०स०च० १।१४।७४

(····आभरण रहित यशोमती ऐसी कुंदशाखा के समान हो गयी जिस पर से फूल बीन लिये गये हों)।

अपभ्रंश के इन प्रबन्धकाव्यों में न केवल प्रेम और प्रकृति के अनूठे चित्रण हैं, अपितु युद्ध की भीषणता और श्मशान की भयंकरता के भी सजीव वर्णन उपलब्ध हैं। संसार की नश्वरता के तो अनेक सन्दर्भ हैं, जो विभिन्न उपमानों से भरे हुए हैं। शरीर की नश्वरता का क्रम द्रष्टव्य है—

तणु लायगणु वण्णु णव जोवण्णु रुव विलास संपया।
सुरघण मेह जाल जल बुव्बुय सरिसा कस्स सासया।
सिसुतणु णासइ णवजोव्वणेण जोव्वणु णासई बुड्ढत्तणेण।
बुड्ढत्तणु पाणिणं चलियएण पाणु वि खंधोहि गलियएण।

—ज०ह०च० ४. १०. १-४

अपभ्रंश के प्रबन्धकाव्यों का शिल्प की दृष्टि से स्वतन्त्र अध्ययन अपेक्षित है। इनके सूक्ष्म अध्ययन से ज्ञात होता है कि हिन्दी के प्रेमाख्यान काव्यों का जो स्वरूप आज स्थिर हुआ है उसका बीजवपन और अंकुरोद्भव अपभ्रंश कविता में हो चुका था। अभी कुछ समय पूर्व तक जिस प्रतीक योजना को सूफी काव्यों की मौलिक उद्भावना माना जाता रहा है वह अपभ्रंश रोमांचक काव्यों की प्रतीक पद्धति की देन है। यही स्थिति हिन्दी के प्रबन्धकाव्यों की

शैली और शिल्प की है, जिसने अपभ्रंश काव्यों से बहुत कुछ ग्रहण कर उसे अपने ढंग से अभिनव वातावरण में विकसित किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

१. कोछड़, हरिवंश : अपभ्रंश साहित्य
२. जैन, हीरालाल : णायकुमारचरिउ (भूमिका)
३. भायाणी, एच०सी० : पउमचरिउ (भूमिका)
४. जैन, देवेन्द्रकुमार : अपभ्रंश भाषा और साहित्य
५. शास्त्री, देवेन्द्रकुमार : भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश कथाकाव्य
६. जैन, राजाराम : महाकवि रइधू और उनका साहित्य
७. सिंह, नामवर : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग
८. उपाध्याय, संकटाप्रसाद : कवि स्वयम्भू
९. जैन, विमलप्रकाश : जम्बूसामिचरिउ (प्रस्तावना)
१०. जैन, प्रेमचन्द : अपभ्रंशकथाकाव्यों का हिन्दी प्रेमाख्यानकों के शिल्प पर प्रभाव
११. शास्त्री, नेमिचन्द्र : प्राकृत भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास

□□□□